भारत के समग्र ग्रामीण विकास के संदर्भ मे गांधी जी के आर्थिक दर्शन के महत्व एवं व्यवहारिकता का मूल्यांकन

*डा० जयश्री भारद्वाज
*डा० शरद चन्द्र

सांराश :
गांधी जी का आर्थिक दर्शन ग्रामस्वराज,स्वदेशी, आत्मनिर्भरता, और श्रम की गरिमा पर आधारित था। उनका मानना था कि भारत की आत्मा गॉवो मे बसती है इसलिए भारत का वास्तविक विकास गांवो के विकास द्वारा ही संभव है।उन्होने उत्पादन और उपभोग की स्थानीय व्यवस्था पर बल दिया, जिससे न केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता बढ़े वरन सामाजिक समरसता भी स्थापित हो। चरखा, खादी और कुटीर उद्योग उनके आर्थिक विचारों के प्रतीक थे, जो ग्रामीणों की आजीविका को सुनिश्चित करने और रोजगार सृजन के साधन थे। भारत के समग्र ग्रामीण विकास में गांधी जी के विचार आज भी प्रांसगिक दिखाई देते। है। क्यो कि वे टिकाऊ विकास,पर्यावरण संरक्षण, विकेन्द्रीकरण, कृषि, ग्रामीण उद्योग, सफाई, आरोग्य, मकान, शिक्षा, ग्राम संगठन और समान अवसर की भावना को बल प्रदान करते है।इस प्रकार गांधी जी का आर्थिक दर्शन न केवल भारत के समग्र ग्रामीण विकास के लिए वैचारिक आधार प्रदान करता है वरन वर्तमान समय मे भी व्यवहारिक समाधान के रूप मे महत्वपूर्ण है। गांधी जी के विचारो मे एक मौलिक शक्ति है। और उसके प्रयोग से समग्र मानवीय आंकाक्षाओ की तृप्ति होगी, ऐसा विश्वास है।

शब्द कुंजी : अपरिग्रह, आध्यात्मिकता, कर्मठता, उत्पादक वर्ग, केन्द्रीयकरण, खादी का अर्थशास्त्र, आर्थिक दर्शन, क्षणिक आनन्द, शोषण गृह, ग्रामस्वराज्य, सहकारिता, औद्योगिक सभ्यता, सर्वोदय पद्धति, परस्परावलम्बी, भूदान, विश्वबन्धुत्व,
अस्तेय।

जब कल्पना में संजोई हुई देवत्व की गध हो, तब हर किसी के मन में उसे प्राप्त करने, सहेजने तथा धरोहर के रूप में उसमें समाहित होने की ललक भी होती है और व्यग्रता भी। यही ललक और व्यगता ही उसे समुद्र में पहुँच जाने का मार्ग देती है साथ ही अन्तरिक्ष के शून्य को खोजने और भेदने की प्रबल आकांक्षा थी।गाँधी जी के सिद्धान्तो मे 'अस्तेय' और 'अपरिगृह' के प्राणतत्व है। यह उन्हें नई समाज व्यवस्था के प्रति उदघोषित आधार देते है जिसमे उनके रामराज्य का आदर्श प्रतिबिम्बित होता है। गाँधी जी विराम नहीं गति है, विवशता नही आकुलता है, भाव नही भावना है, मौन नहीं गुंजन है, शून्य नही विराट है।

तीव्र गति से तकनीकी प्रगति, मिश्रित वर्गमय समाज, भौतिक विचार पद्धतियाँ, राजनीतिक व्यवस्थाओं मे दुराव,प्राचीन सामाजिक संस्थाओं तथा सामाजिक मूल्यो और अर्वाचीन सामाजिक संस्थाओ और मूल्यो में संघर्ष, व्यक्ति तथा समाज का द्वन्द, कर्तव्य और अधिकार मे विरोध, भौतिकता के बाहुल्य में आध्यात्मिकता की क्षीणता, सम्पन्नता में विपन्नता, भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक मान्यताओं में असंगति आदि विषम परिस्थितियों का गहन अध्ययन गांधीजी ने किया और इनके निराकरण के लिये युग के चलन में आने वाले कार्यों तथा विचारो को मानवीय मूल्यो की कसौटी पर परखा और अपनाया । गांधी जी ने इनके परिवर्तन द्वारा क्रान्तिमय नये समाज, नये मानव तथा नये मूल्यो की सृष्टि की है। आर्थिक समता, कल्याण तथा न्याय की स्थापना के लिये, मार्क्स के समान ही गाँधी जी ने वर्ग- विहीन, राज्य विहीन एवं शोषण विहीन समाज की स्थापना मे मानवता का उत्कर्ष माना है परन्तु उसकी प्राप्ति के लिये गांधी जी ने संस्कारबद्ध कर्मठता के द्वारा सम्पूर्ण समाज को एक ही 'उत्पादक वर्ग' मे परिवर्तित करने की नयी योजना प्रस्तुत की है प्रत्येक व्यक्ति स्वयं स्वतंत्र, स्वावलम्बी व चेतन बनकर समाज का अणु बनेगा। सत्ता तथा सम्पत्ति के घोर केन्द्रीयकरण का गांधी ने पूर्ण परीक्षण किया और मनुष्य को अपने उत्पादन के साधन और विधियो को बदलने के लिये बाध्य किया। बिना मनुष्य को स्वसम्पन बनाये सार्वभौम सम्पनता संभव नही है। भौतिक समृद्धि के लिये गांधी जी ने एक नयी व्यवस्था तथा तकनीक अर्थात तन्त्र और यन्त्र का विधान दिया। इस प्रकार गांधी जी ने एक सम्पूर्ण सर्वागीण जीवन प्रयोग करके हमे नया मार्ग बताया।

ग्रामीण अर्थशास्त्र का पूर्णतया विश्लेषण करके गांधी जी ने इसे सर्वोपरि स्थान दिया है। इसके चार स्तम्भ खेती, बारी,पशु तथा उद्योग की सारी समस्याओं का जो चित्र उपस्थित किया है, वह प्रकृतिवादी अर्थशास्त्रियों तथा वर्तमान युग तक के अर्थशास्त्रियों के निरूपण से मेल खाते हुये भी विचित्र है। खाद्यान्न, उपयोगी कच्चे माल की मात्रा तथा प्रकार का निर्धारण और नशीली व्यवसायिक वस्तुओं के उत्पादन का विषय एक नये कृषि अर्थशास्त्र का सृजन करता है। ग्रामोद्योग तथा खादी का अर्थशास्त्र नये मूल्य का आधार बनता है।लोकअर्थशास्त्र,नियोजन,श्रम, पूंजी, यन्त्र, स्वामित्व, बेकारी,मुद्रा विनिमय, वितरण, व्यवस्था पद्धति

का नया स्वरूप गांधी जी ने दिया। युग की मानवीय मांग के अनुकूल ही इनका विचार है सभी का विकास हो, सभी सुखी हो, यही गांधी जी का सर्वोदय दर्शन है।

मनुष्य, मशीन, व्यवस्था, साधन तथा पद्धति के ये पंच तत्व गांधी जी के आर्थिक दर्शन में पूर्णतया मानव कल्याणकारी स्वरूप धारण कर लेते है। कैसे इनका नया रूप स्थायी रहे, यही गाँधी जी की मौलिकता है इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को काम, दाम, तथा प्रतिष्ठा गांधी जी ने प्रदान की है। सामूहिक सफाई, कताई तथा प्रार्थना को दैनिक व्रत बना दिया है। गांधी जी ने विकासशील देशों की आर्थिक कठिनाईयो का भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ मे चिन्तन किया। विदेशो के भौतिक दिखावटी उपयोग को छोड़ स्वास्थ्य वर्धक, जीवनदायिनी आवश्यकताओ की तृप्ति पर बल दिया है। सादा जीवन उच्च विचार उनका लक्ष्य है। अर्थव्यवस्था विदेशों की भाँति उपभोग प्रधान न होकर उत्पत्ति प्रधान हो तथा सर्वप्रथम मूलभूत आवश्यकताओं की संतुष्टि की जाये। विलासिता सम्बन्धित आवश्यकताओ की तृप्ति समाज में मूलभूत आवश्यकताओं की संतुष्टि के उपरान्त ही हो। उपभोग की मात्रा उतनी ही हो जितना उपभोक्ता उत्पादन कर सकता हो। उपभोग करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि उपभोग इन्द्रीयो के क्षणिक आनन्द के लिये न हो अपितु सुख एवं कल्याण के लिये हो, साथ ही यह अहिंसा के आधार पर होना चाहिये जिससे उसका किसी भी सम्बन्धित व्यक्ति पर विपरीत प्रभाव न पड़ने पाये।

जब अर्थशास्त्र और जीवन मे ग्रामदृष्टि का प्रवेश होगा, तब देहात की चीजो का अधिकाधिक उपभोग करने की ओर जनता का मन झुकेगा। अपने जीवन की आवश्यक वस्तुएं देहात में तैयार कराने की ओर उसका झुकाव होगा। जिसके फलस्वरूप देहात की कला और औजारों को सुधारने की, देहात के लोगों को सिखाने पढ़ाने की, देहाती जंगल तथा खेती की पैदावार तथा उपयोग करने के ज्ञान के अभाव मे देहात में बेकार चली जाने वाली सम्पत्ति व अनेक प्राकृतिक साधनो की जांच पड़ताल की प्रवृत्ति पैदा होगी। गांधी जी को ग्राम प्यारा था। वह आज के शहरो को देखना नही चाहते थे। शहर की सारी अर्थव्यवस्था का आधार शोषण है। समस्त शोषक और अनुत्पादक वर्ग शहरो मे रहता है। शहर ग्राम के शोषणगृह है। सारी सम्पत्ति का सृजन ग्रामीण क्षेत्र मे होता है इसलिये ग्रामवासी किसान भगवान है, अन्नदाता है और सबका पालनकर्ता है। गांधी जी ग्रामस्वराज्य के लिये ही जीवनभर लड़ते रहे। उनका मानना था कि स्वतन्त्र भारत का राष्ट्रपति किसान होना चाहिये । नये प्रकार के गाँव का निर्माण करना, गाँव को पूर्ण शक्तिशाली बनाना, प्रत्येक व्यक्ति को ग्रामसेवा की ओर संलग्न करना गांधी जी का प्रथम रचनात्मक कार्य था। ग्रामीण अर्थशास्त्र जितना ही सबल तथा पुष्ट होगा उतना ही राष्ट्र सुखी तथा सम्पन होगा। उनके अनुसार खेतीबारी, पशुपालन तथा उद्योग पर ग्रामीण अर्थशास्त्र खड़ा है। पंचायत सहकारिता आदि का अर्थव्यवस्था मे क्या योग है, इसकी पूरी भीमांसा गांधी जी ने की है।

आज की औद्योगिक सभ्यता एक महान रोग है। बडी मशीन, बडे उद्योग मानवीय गुणो के नाशक है। बड़े यन्त्रो से मनुष्य का शरीर और मस्तिष्क विकृत होता है। मनुष्य, मनुष्य न रहकर मशीन का पुर्जा बन जाता है। मनुष्य की कारीगरी, कला, संस्कृति आदि का नाश हो जाता है। कृत्रिम मांग तथा कृत्रिम् खपत, अंधाधुन्ध विज्ञापन, नकली तथा विदेशी वस्तुओं की सृष्टि, बेकारी, दरिद्रता , असमर्थता का प्रसार ,सम्पन्नता के मध्य विपन्नता की पाश्विक लीलायें, प्राकृतिक साधनो का दुरुपयोग, अनावश्यक वस्तुओ का उत्पादन आदि मशीनो के कारण हो रहे है। लोभ, ईष्या तथा संघर्ष की वृद्धि हो रही है। उत्पादन स्वास्थ्य के लिये न होकर स्वाद के लिये हो रहे है। अर्थव्यवस्था में मशीन तथा उद्योग ऐसे हो जिनमें प्रत्येक मनुष्य को अपने उत्तरदायित्व का भान हो, उद्योग तथा कला मे विच्छेद न हो, शरीर के लिये कुछ परिश्रम आवश्यक हो, अधिक गन्दा कार्य मशीनो द्वारा हो। कृषि की सभ्यता तथा इसका अर्थशास्त्र सर्वोतम हो, यही गांधी जी ने प्रतिपादित किया है।

गाँधी जी के विचारो के अनुसार मशीनो का प्रयोग सामन्तशाही में सत्ता के लिये किया गया, पूंजीवाद मे शोषण के लिये किया गया परन्तु सर्वोदय मे भातृभावना तथा प्रेम के लिए किया जायेगा। नवीन अविष्कार प्रत्येक व्यक्ति को स्वसम्पन्न,समर्थ तथा स्वतन्त्र बनाने की दिशा मे होगा। सबको काम, उचित दाम तथा पूर्ण प्रतिष्ठा का लक्ष्य विकेन्द्रित उद्योगो तथा कृषि द्वारा ही संभव है। पूजीवादी पद्धति मे उत्पादन विक्रय तथा विनिमय के लिये होता है। समाजवाद में उत्पादन उपभोग के लिये परन्तु सर्वोदय पद्धति से उत्पादन स्वास्थ्य तथा पड़ोसी के लिये होता है। भातृभाव के प्रसार के लिये उत्पादन होगा। उत्पादन के साधनो का और उत्पादन विधियो का पूंजीवाद मे व्यक्तिकरण और समाजवाद में समाजीकरण होता है, परन्तु सर्वोदय पद्धति से उनका परिवारीकरण होगा। बाजार व दरबार की अर्थव्यवस्था परिवार की अर्थव्यवस्था में बदल जायेगी। पारिवारिक अर्थव्यवस्था में पूंजीवादी तथा समाजवादी अर्थव्यवस्था के समस्त दोषो का निराकरण होगा।

प्रत्येक व्यक्ति स्वावलम्बी होगा। स्वावलम्बन की अर्थव्यवस्था होगी और पूंजीवादी परावलम्बी अर्थव्यवस्था का अन्त होगा। प्रत्येक व्यक्ति स्वावलम्बी बनकर परस्परावलम्बी बनेगा। कोई कार्य छोटा या बड़ा नही होगा। प्रत्येक उपभोक्ता अपनी उपभोग की वस्तुओं का निर्माता बनने में गौरव का अनुभव करेगा। शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा होगी | समाज ये जिस व्यक्ति के पास जो भी उत्पादक शक्ति और पूंजी है, उसका प्रयोग समाज की समृद्धि में करेगा । श्रमदान, भूदान, सम्पतिदान, बुद्धि दान, साधन दान तथा जीवन दान की प्रक्रिया से प्रत्येक व्यक्ति समाज को सम्पन्न बनायेगा। आध्यात्मिक समाजवाद का स्वरूप सर्वोदय अर्थव्यवस्था निखारती है। इस प्रकार की पद्धति में परिवार के भीतर सभी गुणात्मक मूल्यों का विकास होगा जिससे विश्वबन्धुत्व के अहिंसात्मक

आधार पुष्ट होगे। उत्पादन के साधनो का प्रयोग करने का अधिकार सामाजिक भूमिका मे सबको है परन्तु स्वामित्व का स्वरूप अनुत्पादक नही होगा। समाज सम्पत्तिनिष्ठ नही अपितु श्रमनिष्ठ होगा। ग्राम प्रथम तथा प्रभावशाली इकाई होगा। कार्य विभाजन राष्ट्र स्तर पर, क्षेत्रस्तर पर तथा ग्रामस्तर पर प्रकार व पद्धति के आधार पर होगा। समाज तथा व्यक्ति के द्वन्दो का अस्तित्व मिट जायेगा। रामराज्य, ग्रामस्वराज्य, ग्रामदान की सर्वोदय अर्थनीति की कल्पना है। कृषि, ग्रामीण उद्योग, सफाई, आरोग्य, मकान, शिक्षा, ग्राम संगठन आदि पर विशेष बल है। गांधी जी के विचारो में एक मौलिक शक्ति है और उसके प्रयोग से समग्र मानवीय आकांक्षाओं की तृप्ति होगी। ऐसा विश्वास है।

संदर्भ सूची :

1° गॉधी एम°के° , “इक्नोमिक्स एण्ड इण्डस्ट्रीयल लाइफ एण्ड रिलेशन” इलाहाबाद, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर ।
2° गॉधी एम°के°, 'खादी' इलाहाबाद, नवजीवन प्रकाशन, मन्दिर। 3° भारत सरकार, “राष्ट्र निर्माता गांधी”, दिल्ली, प० डिवीजन।
4° भंडारी चन्द्रराज “ग्राम दान क्यो”, वाराणसी सर्व सेवा संघ।
5° मजूमदार धीरेन्द्र, “ग्राम राज्य क्यों और कैसे' वाराणसी, सर्व सेवा संघ।
6° एस° एन° शिवलाल, “गांधीवादी योजना के सिद्धान्त” शिवलाल अग्रवाल, आगरा।

7° सूचना-प्रसारण केंद्र , “योजना “ नई दिल्ली।
8° कुमारप्पा भारतन, “पुँजीवाद, समाज और ग्रामोद्योग”।

* डा. जयश्री भारद्वाज
एसो° प्रोफेसर अर्थशास्त्र विभाग,
आगरा कालेज, आगरा।

* डा० शरद चन्द्र,
एसो० प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग,
आगरा कालेज, आगरा।